मुक्त व्यापार समझौते और भारतः

कृषि और किसानों को आर.सी.ई.पी. (RCEP) से खतरा

भूमिका :

मुक्त व्यापार समझौते (FTA) एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें दो या दो से अधिक देश या व्यापारिक गुट आपस में आयात और निर्यात सहज बनाने के लिए सीमा शुल्क में कटौती या कमी एवं गैर–सीमा शुल्क संबंधी अवरोधों को दूर करने के लिए सहमत होते हैं। किसी भी देश के व्यापार में आयात और निर्यात का संतुलन होना चाहिए। अगर किसी देश का आयात, निर्यात के मुकाबले ज्यादा होने लगे तो उसे व्यापार घाटा (ट्रेड डिफिसिट) कहा जाता है। इसी तरह अगर निर्यात देश के आयात से ज्यादा हो तो उसे व्यापार अधिशेष (ट्रेड सरप्लस) कहेंगे। वर्ष 2015–16 के आर्थिक सर्वेक्षण से यह पता चलता है कि भारत ने अभी तक 42 ऐसे मुक्त व्यापार समझौतों पर हस्ताक्षर किए हैं जिसके कारण भारत में आयात की मात्रा निर्यात से काफी ज्यादा बढ़ गई है। इस रिपोर्ट के अनुसार ''व्यापार आयात की तरफ ज्यादा बढ़ रहा है न कि निर्यात की तरफ। ऐसा इसलिए है क्योंकि भारत का अन्य देशों की तुलना में सीमा शुल्क ज्यादा था जिसके कारण भारत को सीमा शुल्क में ज्यादा कटौती करनी पड़ी।'' नीति आयोग द्वारा तैयार 'मुक्त व्यापार समझौते और उनकी कीमतों पर रिपोट' के अनुसार आसियान, दक्षिण कोरिया, और जापान के साथ मुक्त व्यापार समझौतों के बाद से भारत को अधीक व्यापार घाटा (ट्रेड डिफिसिट) का सामना करना पड़ रहा है।

मुक्त व्यापार समझौतों में आमतौर पर देशों के बीच व्यापार प्रतिबंधों को हटाया या कम किया जाता है जिससे माल और सेवाओं की आवाजाही को सुगम बनाया जा सके। इसमें सीमा शुल्क (चुंगी, सरचार्ज और निर्यात सब्सिडी) तथा गैर–सीमा शुल्क अवरोध (जैसे लाइसेंस के नियम व विनियम, कोटा और मानकों जैसी अन्य जरूरतें) को या तो कम किया जाता है या खत्म कर दिया जाता है। हालांकि, विश्व व्यापार संगठन (WTO) के विपरीत, इन मुक्त व्यापार समझौतों में सीमा शुल्क में कटौती को बेस रेट (आधार दर)[1] के संदर्भ में किया जाता है। अर्थात् जिस दर पर सबसे पसंदीदा देशों (मोस्ट फेवर्ड नेशन) के लिए शुल्क तय की गई हो। विश्व व्यापार संगठन में यह कटौती हमेशा 'बाध्यकारी दर'[2] (Bound Rate) पर आधारित होती है, न कि पसंदीदा देशों पर लागू दरों (MFN Applied Rate) के आधार पर।

यहां यह महत्वपूर्ण होता है कि समझौते में शामिल देशों के पास सौदेबाजी की कितनी शक्ति है। इसी आधार पर यह तय होता है कि मुक्त व्यापार समझौतो में किस हद तक व्यापार, सेवाओं और निवेश को उदार बनाया जाएगा। विश्व व्यापार संगठन के समझौतों में ऐसा नहीं होता है। मुक्त व्यापार समझौते दरअसल एक और तरीका है जिससे सरकारों को कॉरपोरेट–भूमंडलीकरण–एजेंडे पर आधारित उदारीकरण, निजीकरण और विनियमन की ओर ढकेला जाता है।

पारंपरिक रूप से उत्तर–दक्षिण (North South) मुक्त व्यापार समझौते बेहद व्यापक होते हैं। इनकी मंशा ट्रांस्नैशनल कॉरपोरेट्स के लिए नए अवसर खोलने का होता है जिससे वे विकासशील देशों से और ज्यादा मुनाफा नीचोड़ सकें। दरअसल, ये उत्तर–दक्षिण समझौते नव–औपनिवेशिक होते हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियों के मुनाफे के लिए विकासशील देशों की प्राकृतिक संसाधन और सस्ते मजदूरों को उपलब्ध कराया जाता है। दूसरी तरफ, दक्षिण–दक्षिण (South-South) समझौते (जैसे भारत और श्रीलंका) आमतौर पर, कम विस्तृत होते हैं। इनका रुख राष्ट्रीय कानून में बड़े बदलाव लाने का नहीं होता है। इसके बावजूद भी किसानों, मजदूरों और पर्यावरण के ऊपर इसके भयानक परिणाम देखने को मिलते हैं। हाल के वर्षों में, दक्षिणी देशों या विकासशील देशों के बीच समझौतों का स्वरूप भी विकसित (उत्तर) और वकासशील (दक्षिण) देशों के बीच के समझौतों की तरह हो गया है। क्योंकि माल (कृषि या औद्योगिक उत्पाद) या सेवाओं में व्यापार (बैंकिंग, निर्माण, व्यापार, शिक्षा और अन्य सेवाएं इत्यादि) के अलावा आज के अधिकांश मुक्त व्यापार

---

[1] बेस रेट (आधार दर) वह प्रयुक्त दर होता है जो किसी विशिष्ट वर्ष में सबसे पसंदीदा देश के ऊपर लगाया जाता है; इसे आपसी सहमति से तय किया जाता है

[2] **बाध्यकारी दर, डब्ल्यूटीओ के अंतर्गत वह सर्वोच्च दर या सीमा है जो एक देश अपने लिए तय करता है। यह ऊपरी सीमा होती है जिसे** वह देश कभी पार नहीं कर सकता। इसके विपरीत 'प्रयुक्त दर' वह शुल्क है जो लागू हो रहा हो। प्रयुक्त दर कम भी हो सकता है पर वह कभी भी बाध्य दर से ज्यादा नहीं होगा। इसलिए बाध्यकारी दर का एक विशेष महत्व है क्योंकि वह सीमा शुल्क को बढ़ाने की देश की क्षमता को सीमित करता है।

समझौतों में 'बौद्धिक संपदा अधिकार' (आई.पी.आर.), निवेश, वैश्विक मूल्य श्रृंखला (Global Value Chain), सरकारी खरीद और प्रतिस्पर्धा नीतियां इत्यादि शामिल हैं। इस प्रकार देखा जाए तो आज के अधिकांश मुक्त व्यापार समझौते विश्व व्यापार संगठन से भी कहीं आगे निकल चुके हैं। ये समझौते अपने सदस्य देशों के ऊपर कानूनन बाध्यकारी कर्तव्यों की बात करते हैं। इससे इन देशों की नीति निर्धारण स्वतंत्रता बाधित होती है। आजीविका, दवाइयों और सस्ती स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता, जनसेवा, और पारंपरिक ज्ञान प्रणाली के ऊपर इसका बुरा प्रभाव पड़ता है। कृषि क्षेत्र में इन मुक्त व्यापार समझौतों के कारण आयात शुल्क में भारी कटौती की गई है, कृषि प्रसंस्करण और खुदरा व्यापार को बढ़ावा मिला है, और सख्त आई.पी.आर. प्रावधानों के कारण छोटे एवं सीमांत किसानों के ऊपर बुरा प्रभाव पड़ा है। बीज उत्पादन, बीज संरक्षण और बीज बेचने के उनके अधिकार छिन रहे हैं।

मुक्त व्यापार समझौतों के कई प्रकार होते हैं – द्विपक्षीय, क्षेत्रीय, या बहुपक्षीय। भारत ने हर प्रकार के समझौतों पर हस्ताक्षर किए हैं। उदाहरण के लिए भारत का श्रीलंका, दक्षिण कोरिया, जापान, मलेशिया के साथ अलग–अलग द्विपक्षीय व्यापार समझौते हैं जहां दोनों व्यापार पक्ष ये तय करते हैं कि वे अपने व्यापार अवरोधों को कम करेंगे और एक दूसरे को पसंदीदा व्यापार साक्षेदार के रूप में स्वीकार करेंगे। कुछ द्विपक्षीय व्यापार समझौते निवेश के क्षेत्र में भी होते हैं जिन्हें द्विपक्षीय निवेश संधि (बाइलेटेरल इन्वेस्टमेंट ट्रीटीज़ – BIT) कहा जाता है।

'क्षेत्रीय व्यापार समझौते' आमतौर पर दो या दो से अधिक पड़ोसी देशों के बीच होते हैं जो आपस में एक दूसरे के माल और सेवाओं के व्यापार को प्राथमिकता देते हैं। भारत ने 2004 में दक्षिण एशिया में एक क्षेत्रीय व्यापार समझौता पर हस्ताक्षर किया था जिसे ''साउथ एशियन फ्री ट्रेड एग्रीमेंट'' (साफ्टा) के नाम से जाना गया। इसके जरिए सार्क (SAARC) देशों के बीच व्यापारिक एवं आर्थिक संबंधों को बेहतर बनाया गया।

पिछले कुछ वर्षों में एक नई प्रवृत्ति की शुरुआत हुई है जिसमें मुक्त व्यापार समझौते में शामिल सदस्य देश – (1) दो या दो से अधिक होते हैं; (2) जो जरूरी नहीं है कि एक ही क्षेत्र या महाद्वीप से हों; और (3) ऐसे विषयों पर हों जिनका दायरा डब्ल्यूटीओ के दायरे से भी आगे हो। उदाहरण के रूप में भारत इस वक्त एक बहुपक्षीय व्यापार समझौता वार्ता में शामिल है जिसे 'क्षेत्रीय विस्तृत आर्थिक साझेदारी' या 'रीज़नल कंप्रिहेंसिव इकोनामिक पार्टनरशिप' (आर.सी.ई.पी. या RCEP) कहा जा रहा है। इस वार्ता में भारत के साथ करीब 15 सदस्य देश शामिल हैं, जिनमें से 10 सदस्य (ब्रूनेई, कंबोडिया, इंडोनेशिया, लाओस, मलेशिया, म्यानमार, सिंगापुर, थाईलैंड, वियतनाम और फिलीपींस) आसियान से हैं और बाकी के देश – ऑस्ट्रेलिया, चीन, जापान, न्यू जीलैंड और दक्षिण कोरिया हैं। इस बहुपक्षीय व्यापार समझौते को नए दौर के मेगा मुक्त व्यापार समझौतों (Mega FTA) के रूप में देखा जा रहा है क्योंकि यह न केवल अपने आकार में बड़े हैं बल्कि भौगोलिक दृष्टि से विविध भी है। इसके साथ–साथ इस समझौते में एसे महत्वाकांक्षी मुद्दे भी शामिल हैं जिन्हें अक्सर 'डब्ल्यूटीओ–प्लस' मुद्दों के रूप में जाना जाता है।

वैश्विक स्तर पर उभरने वाले व्यापार एवं आर्थिक ढांचे की पूरी क्षलक हम आर.सी.ई.पी. में देख सकते हैं। ''आर.सी.ई.पी. वार्ता के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत एवं उद्देश्य'' – यह एक ऐसा दस्तावेज है जिसमें मौजूदा मुक्त व्यापार समझौते को व्यापक और गहन बनाने के लिए सिद्धांत निर्धारित किए गए हैं। इसमें आर.सी.ई.पी. में शामिल विभिन्न देशों की निजी और विविध परिस्थितियों को और उनके विकास के भिन्न स्तरों को भी ध्यान में रखा गया है। इन सिद्धांतों का मकसद वैश्विक और क्षेत्रीय आपूर्ति श्रृंखला के ऊपर देशों के बीच बातचीत को सहज बनाना भी है। इस दस्तावेज में समझौते के विषयों को भी चिन्हित किया गया है जैसे माल, सेवाएं, निवेश, आर्थिक एवं तकनीकी सहयोग, बौद्धिक संपदा, प्रतिस्पर्धा और विवाद निपटान, इत्यादि। नये मुद्दों को भी जोड़ा जा सकता है। अगर यह आर.सी.ई.पी. समझौता तैयार हो जाता है तो यह विश्व का सबसे बड़ा व्यापार गुट बन जाएगा। इसकी परिधि में विश्व की 45 प्रतिशत जनसंख्या, 30 प्रतिशत वैश्विक जी.डी.पी (सकल घरेलू उत्पाद या GDP), 27.4 प्रतिशत वैश्विक माल व्यापार, और 23 प्रतिशत वैश्विक सेवा व्यापार शामिल होगा।

16 देशों के बीच आर.सी.ई.पी. समझौता वार्ता पूरी रफ्तार से चल रही है। सितंबर 2018 तक इस वार्ता के 23 दौर पूरे हो चुके हैं, जिसमें से 6 बार मंत्रीस्तरीय बैठकें हो चुकी हैं। अगली बैठक मुख्य–वार्ताकारों के स्तर पर होनी है जो इसी महीने (अकतुबर 2019) में ऑकलैंड में निर्धारित है। यह अनुमान लगाया जा रहा है कि इस वर्ष दिसंबर तक आर.सी.ई.पी. समझौता वार्ता अपने अंतिम चरण तक पहुंच जाएगी। परंतु भारत के व्यापार मंत्री के बयान के अनुसार इस वर्ष के अंत तक यह पूरा नहीं हो पाएगा क्योंकि शुल्क कटौती के ऊपर बातचीत अभी भी अधूरी है और सदस्य देशों के बीच अभी भी सेवा, निवेश तथा अन्य मुद्दों पर व्यापार के ऊपर सहमति नहीं बनी है।

मौजूदा मुक्त व्यापार समझौतों का असर

मुक्त व्यापार समझौतों के बुरे प्रभाव अभी से औद्योगिक और कृषि क्षेत्र में दिख रहे हैं। पिछले कुछ सालों में भारत के औद्योगिक समूह लगातार मुक्त व्यापार समझौतों से जुड़े मुद्दों को उठा रहे हैं – विशेष रूप से भारत बनाम – श्रीलंका (1998), थाईलैंड (2003), सिंगापुर (2005), दक्षिण कोरिया (2009), आसियान (2009), जापान (2011) और मलेशिया (2011) समझौतों के संदर्भ में। इनमें से अधिकतर समझौतों के कारण भारत को अपना सीमा–शुल्क कम करना पड़ा जिससे निर्यात गिर गया और आयात कहीं अधिक रफ्तार से बढ़ने लगा। भारत का व्यापार घाटा वर्ष 2010–11 में 3.6 बिलियन[3] डॉलर था। परंतु मुक्त व्यापार समझौते के बाद 2012–13 में एक साल के अंदर यह व्यापार घाटा बढ़कर करीब–करीब दोगुना हो गया (6.3 बिलियन डॉलर)। इसी तरह, वर्ष 2007–08 से लेकर 2009–10 के बीच भारत और दक्षिण कोरिया के बीच आयात 7.8 बिलियन डॉलर था, जो मुक्त व्यापार समझौते के बाद वर्ष 2010–11 से 2012–13 के बीच बढ़कर 12.1 बिलियन डॉलर हो गया। इस अवधि के दौरान भारत और दक्षिण कोरिया के बीच निर्यात में केवल मामूली बढ़ोतरी हुई। यह 3.4 बिलियन डॉलर से बढ़कर केवल 4.1 बिलियन डॉलर तक ही पहुंचा, परंतु दूसरी तरफ व्यापार घाटा 4.4 मिलीयन डॉलर से बढ़कर 8 बिलियन डॉलर हो गया। आर.सी.ई.पी भारत का सबसे बड़ा मुक्त व्यापार समझौता होने वाला है, इसकी प्रतिबद्धताएं पिछले समझौतों से कहीं ज्यादा बड़ी और गंभीर होने वाली हैं।

भारत का सबसे बड़ा एवं पुराना शीर्ष व्यापार निकाय – 'फिक्की' (फेडरेशन ऑफ इंडियन चैंबर्स ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्रीज या FICCI) ने भी इन्हीं वजहों से किसी भी नए मुक्त व्यापार समझौतों पर हस्ताक्षर करने पर रोक लगाने की मांग की है। अगस्त 2013 में फिक्की ने 12 सूत्रीय 'विनिर्माण जनादेश' के माध्यम से यह कहा कि ''इन समझौते में ऐसा माना जाता है कि परस्पर लाभकारी परिणाम का प्रावधान होंगे, पर अभी तक के अनुभव कुछ और ही बताते हैं, विशेष रूप से विनिर्माण क्षेत्र में। इसलिए सारे मौजूदा समझौतों की समीक्षा होनी चाहिए और जब तक यह मूल्यांकन पुरा न हो सरकार को तुरंत नए समझौते पर रोक लगा देनी चाहिए।'' हाल ही में, 6 जनवरी 2016 को भारतीय औद्योगिक चेंबर ने मुक्त व्यापार समझौतों के विरोध किया। पूर्व वाणिज्य और उद्योग मंत्री, निर्मला सीतारमण के साथ एक बैठक में भारतीय औद्योगिक चेंबर ने कहा कि इन समझौतों से भारत को कम और अन्य देशों को ज्यादा फायदा मिला है। फिक्की का सुझाव था कि नए समझौतों पर हस्ताक्षर करने से पहले मौजूदा मुक्त व्यापार समझौतों का एक गहन मूल्यांकन होना चाहिए। कई मौकों पर घरेलू इनपुट कीमत में बढ़ोतरी से विनिर्माण के खर्च पर असर पड़ रहा है। बिक्री मूल्य का संबंध आयात खर्च से होने के कारण उद्योगों की कीमत निर्धारण क्षमता नष्ट हो गई है, जिससे ये उद्योग अब आर्थिक रूप से व्यवहार्य नहीं रहे।

कृषि क्षेत्र में भी मुक्त व्यापार समझौतों के काफी बुरे परिणाम दिख रहे हैं क्योंकि यहां न केवल सीमा–शुल्क को कम किया गया है (जैसा कि डब्ल्यूटीओ के मामले में होता है) बल्कि अधिकतर जगहों पर पूरी तरह से खत्म ही कर दिया गया है। भारत – श्रीलंका मुक्त व्यापार समझौतों पर हस्ताक्षर के बाद श्रीलंका से सस्ती काली मिर्च और इलायची का आयात होने लगा है जिसका केरल के ऊपर बहुत बुरा असर पड़ा है। वर्ष 2015 में श्रीलंका से काली मिर्च की सस्ती किस्म का आयात 9,500–9,750 डॉलर प्रति टन पर हो रहा था। उस वक्त भारत में इसकी कीमत 11,400 डॉलर प्रति टन थी। भारत के काली मिर्च किसानों के ऊपर एक और बड़ा आघात तब पड़ा जब भारत–आसियान मुक्त व्यापार समझौता पर हस्ताक्षर हुआ। अब ज्यादातर काली मिर्च का आयात वियतनाम (जो विश्व का सबसे बड़ा काली मिर्च निर्यातक है) और इंडोनेशिया से होने लगा। वर्ष 2015 में वियतनाम ने 9,800 डॉलर प्रति टन और इंडोनेशिया ने 9,747 डॉलर प्रति टन पर काली मिर्च का निर्यात किया, जो भारतीय कीमत से कहीं कम थी। भारत में काली मिर्च के अत्यधिक आयात से घरेलू कीमत पर बहुत बुरा असर पड़ा। वर्ष 2011–12 में काली मिर्च की स्थानीय कीमत थी 240 रुपये प्रति किलो थी पर जनवरी 2016 में यह घटकर मात्र 80 रुपये प्रति किलो हो गई।

काली मिर्च किसानों के अलावा आसियान देशों के साथ समझौता का भारत के रबर उत्पादकों के ऊपर भी बुरा प्रभाव पड़ा। वियतनाम और इंडोनेशिया से होने वाले सस्ते रबर आयात के कारण अभी तक 10 लाख से भी ज्यादा रबर किसानों को अपने रोजगार से हाथ धोना पड़ा है। वर्ष 2013 तक भारत रबर उत्पादन में आत्मनिर्भर था पर अब यह आयात के ऊपर ज्यादा से ज्यादा निर्भर होता जा रहा है। वर्ष 2013 से 2015 के बीच रबर का आयात करीब–करीब दोगुना बढ़ गया। वर्ष 2013 में यह 2.6 लाख मैट्रिक टन था जो 2015 के अंत तक पहुंचते–पहुंचते 4.4 लाख मैट्रिक

[3] एक बिलियन 100 कड़ोड़ होता है। 30 अकतुबर 2019 को एक डॉलर की कीमत 73 रुपया के बराबर थी, तो 3.6 बिलियन डॉलर = 3.6 X 100 X 73 = 26280 कड़ोड़ रुपया ।

टन हो गया। रबर का निर्यात अब अपने निचले स्तर पर पहुंच चुका है। 2015 में भारत ने मात्र 1002 टन रबर का निर्यात किया, जबकि वर्ष 2013 में 30,549 टन का निर्यात हुआ था। रबर की कीमत 207 रुपये प्रति किलो से घटकर 132.6 रुपए प्रति किलो हो गई है।

भारत–आसियान मुक्त व्यापार समझौता पर हस्ताक्षर के बाद दक्षिण भारत के नारियल किसानों को भी अभूतपूर्व संकट का सामना करना पड़ रहा है। नारियल के दाम घटकर मात्र 3 रुपये प्रति इकाई हो गए है। नारियल की कीमतों में गिरावट के पीछे प्रमुख कारण फिलिपींस और इंडोनेशिया से होने वाला सस्ते नारियल के आयात है।

भारतीय उद्योग और कृषि के ऊपर इतने गंभीर प्रभाव पड़ने के बावजूद भारतीय सरकार के उत्साह में कोई कमी नहीं है। इस वक्त करीब 18 अन्य मुक्त व्यापार समझौता वार्ताओं में सरकार शामिल है। ये वार्ताएं यूरोपीय मुक्त व्यापार संघ, यूरोपीय संघ, इजरायल, न्यू जीलैंड, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, कोलंबिया, अफ्रीकी महाद्वीप मुक्त व्यापार समझौता, उरूग्वे, मर्कोसुर और वेनेजुएला के साथ चल रही हैं।

दूसरी तरफ इन वार्ताओं की प्रक्रिया भी काफी समस्यात्मक, गैर–लोकतांत्रिक और संदिग्ध रूप से गोपनीय होती है। समझौतों के दौरान आम जनता एवं उनके संसदीय प्रतिनिधियों को इससे जुड़े किसी भी दस्तावेज को देखने का अधिकार नहीं है। शायद इसीलिए आज तक किसी भी द्विपक्षीय व्यापार समझौतों का कभी भी किसी राज्य सरकार, राजनीतिक पार्टी या सामाजिक आंदोलनों की तरफ से प्रतिरोध का सामना नहीं करना पड़ा। केवल भारत–आसियान मुक्त व्यापार समझौतों का राजनीतिक विरोध (वाम लोकतांत्रिक फ्रंट केरल सरकार द्वारा) हुआ। केरल सहित दक्षिण भारत के किसानों और मछुआरे समूहों ने भी इसका प्रतिरोध किया। भारत में इन समझौतों का राष्ट्रीय संसद द्वारा अनुसमर्थन की कोई प्रक्रिया नहीं है। करीब–करीब सभी मुक्त व्यापार समझौतों में राज्य सरकारों के साथ भी कोई परामर्श नहीं किया गया भले ही वह कृषि जैसे विषयों पर ही क्यों न हो जो राज्य सरकार के कार्य क्षेत्र में आते हैं।

आर.सी.ई.पी. से जुड़ी प्रमुख चिंताएं

किसी भी अन्य मुक्त व्यापार समझौते की ही तरह आर.सी.ई.पी. समझौता वार्ता में भी कोई पारदर्शिता नहीं रखी गई है। प्रभावित हाने वाली जनता या क्षेत्रीय समूहों, जैसे किसान, महिला, मजदूर, स्वास्थ्य समूहों इत्यादि को कोई भी दस्तावेज उपलब्ध नहीं कराए गए हैं। न ही कभी उनसे कोई परामर्श किया गया है। आर.सी.ई.पी में अनेकों विषय शामिल हैं पर फिर भी बिना किसी सार्वजनिक प्रकटीकरण के अभी तक समझौता वार्ता के 23 दौर पूरे हो चुके हैं। कुछ लीक हुए दस्तावेजों से यह पता चलता है कि आर.सी.ई.पी के कारण दवाई, कर नीति, निवेशक अधिकार, और किसानों को बीज की उपलब्धता के ऊपर काफी गंभीर प्रभाव पड़ेंगे। पिछले 6 वर्षों[4] के समझौता वार्ता के दौरान, कभी भी आर.सी.ई.पी को लेकर संसद में कोई चर्चा नहीं हुई और न ही किसी राज्य सरकार से कोई परामर्श किया गया। हां, सदस्य देशों के कुछ गिने–चुने व्यापारिक समूहों से जरूर थोड़ी बहुत बातचीत की गई है।

दूसरी चिंता आसियान से है, जो इस समझौते के केंद्र में है। इस 16–सदस्यीय मुक्त व्यापार समझौते का उद्देश्य आसियान को एक समूह के रूप में संगठित करने का उतना ही है जितना यह आसियान का अन्य 6 देशों के साथ आर्थिक एकीकरण में गहराई और विस्तार लाने का है। भारत और आसियान के बीच पहले से ही एक मुक्त व्यापार समझौता चल रहा है जिससे भारत को अभी तक कोई फायदा नहीं मिला है। भारत–आसियान समझौते के कारण भारत का आसियान के साथ व्यापार घाटा वर्ष 2010–11 में 4.98 बिलियन डॉलर से बढ़कर वर्ष 2016–17 में 9.56 बिलियन डॉलर हो गया। इससे बड़ा ठोस प्रमाण और क्या चाहिए कि भारतीय उत्पादक इस मेगा 16–सदस्यीय व्यापार समझौते में अपने समकक्ष से प्रतिस्पर्धा कर पाने में सक्षम नहीं है। भारतीय कृषि एवं निर्माण क्षेत्र के लिए यह एक आपदा की तरह होगा। क्योंकि आर.सी.ई.पी के अंतर्गत करीब 92 प्रतिशत उत्पाद शामिल हैं जिनके आयात शुल्क में भारत को कटौती करनी पड़ेगी।

एक दूसरी बड़ी चिंता है – चीन, जो इस मेगा व्यापार समझौते का एक प्रमुख सदस्य है। बिना किसी मुक्त व्यापार समझौते के ही चीन के साथ भारत का व्यापार घाटा वर्ष 2017–18 में 63 बिलियन डॉलर पहुंच चुका है जो 10 वर्ष पहले 2007–08 में केवल 16 बिलियन डॉलर था। भारत के बाजार पहले से ही चीनी उत्पादों से भरे पड़े हैं। इसका

[4] आर.सी.ई.पी के विचार को पहली बार आसियान शिखर वार्ता के समय 2011 में पेश किया गया था। आर.सी.ई.पी वार्ताओं की औपचारिक शुरुआत आसियान शिखर वार्ता 2012 में हुई।

प्रभाव विशेष रूप से खिलौना उद्योग, ताला उद्योग, कपड़ा मशीनरी क्षेत्र, साइकिल निर्माण, डीजल इंजन पंपसेट तथा अन्य उद्योगों के ऊपर साफ देखा जा सकता है। 'एसोचैम' (एसोसिएटेड चैंबर्स ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्रीज़) ने भारतीय खिलौना उद्योग के ऊपर वर्ष 2013 में एक अध्ययन किया जिससे पता चलता है कि भारत के बाजार चीन से आयातित खिलौनों से भरे हुए हैं। इससे भारतीय खिलौना निर्माता पूरी तरह से तबाह हो गए हैं। इसी प्रकार 'टैक्सटाइल मशीनरी मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन' ने चीन से आयात होने वाले सस्ती कपड़ा मशीनों का विरोध किया क्योंकि वे 30 से 50 प्रतिशत तक सस्ते थे। भारत की साइकिल उद्योग भी चीन के आयात से गंभीर रूप से प्रभावित हुआ है। 'यूनाइटेड बाइसिकल एंड पार्ट्स मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन' के अनुसार 5–6 साल पहले (करीब 2008–09 में, लुधियाना से होने वाले कुल निर्यात की मात्रा करीब 1,500 करोड़ रुपए थी। वर्ष 2013–14 में यह बदलकर उलटा हो गया। निर्यात के बदले अब करीब 1,500–2,000 करोड़ रुपए का आयात हो रहा है। आर.सी.ई.पी के तहत सीमा शुल्क में कटौती या कमी का भारतीय विनिर्माण क्षेत्र के ऊपर अभूतपूर्व प्रभाव पड़ेगा। यही नहीं बल्कि आर.सी.ई.पी में एक अन्य प्रावधान है जिसके तहत भारत अपने खनिज और कच्चे माल के ऊपर कोई निर्यात प्रतिबंध नहीं लगा सकेगा। इसकी वजह से कच्चे माल की घरेलू उपलब्धता के ऊपर खतरा मंडराने लगेगा और इससे अत्यधिक खनन को भी बढ़ावा मिलेगा। इसके साथ–साथ आर.सी.ई.पी के आने से पूरी संभावना है कि खाद्य निर्यात पर लगा प्रतिबंध (विशेष रूप से गेहूं और चावल के ऊपर) हटाना पड़ेगा, जो भारत की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण रहा है।

आर.सी.ई.पी से जुड़ी एक और प्रमुख समस्या यह है कि सदस्य देश विशेष रूप से जापान और दक्षिण कोरिया 'ट्रिप्स–प्लस' की मांग कर रहे हैं जिसका संबंध बीज, दवाइयों और कृषि रसायनों के ऊपर बौद्धिक संपदा सुरक्षा से है। यह भारतीय किसानों के लिए खतरनाक होगा। भारत इस वक्त यू.पी.ओ.वी. (यूनियन फॉर द प्रोटेक्शन ऑफ न्यू प्लांट वैराइटीज कन्वेंशन)[5] का सदस्य नहीं है। पर इससे भारत के ऊपर यू.पी.ओ.वी. में सम्मिलित होने का दबाव बढ़ जाएगा और हमें यू.पी.ओ.वी–1991 के मानकों का अनुपालन करना पड़ेगा। यू.पी.ओ.वी. बीज पेटेंट की एक व्यवस्था है जो किसानों के बीज और पौध सामग्री के संरक्षण और आदान–प्रदान के अधिकार को खत्म करता है। इससे सीधे–सीधे बीज संप्रभुता पर चोट पहुंचती है। यह कॉरपोरेट–ब्रीडर को प्राथमिकता देता है। शोध कार्य के लिए शोधकर्ताओं एवं दूसरे ब्रिडरों की आजादी को प्रतिबंधित करता है। ट्रिप्स–प्लस के प्रावधान भी बीज, कीटनाशकद्व खाद और पशु टीका के ऊपर एकाधिकार स्थापित करते हैं और मालिकाना–कृषि (proprietary agriculture) तकनीकों को बढ़ावा देते हैं। ट्रिप्स–प्लस के प्रावधान बड़े कॉरपोरेट घरानों को एकाधिकार तो प्रदान करते हैं, पर वे किसानों और स्थानीय समुदायों के मौजूदा पारंपरिक ज्ञान की सुरक्षा का ध्यान नहीं रखते। स्वास्थ्य क्षेत्र में ट्रिप्स–प्लस प्रावधानों का मतलब है – डेटा विशिष्टता (Data exclusivity) को स्वीकार करना, पेटेंट की शर्तों का विस्तार और उसके साथ–साथ इनका सख्त क्रियांवयन जिससे पूरा जेनेरिक (सामान्य) दवा क्षेत्र कमजोर पड़ जाएगा। ऐसे में केवल भारत में ही नहीं बल्कि पूरे विकासशील विश्व में जेनेरिक दवाओं की उपलब्धता खत्म हो जाएगी। इससे दवाओं के ऊपर अनिवार्य लाइसेंस जारी करने का भारत सरकार का अधिकार भी सीमित हो जाएगा और हमें पेटेंट एक्ट से मिलने वाली स्वास्थ्य सुरक्षा उपायों से हाथ धोना पड़ेगा।

दुग्ध उद्योग के ऊपर पड़ने वाला प्रभाव भी भारत के लिए एक प्रमुख चिंता का विषय है। आर.सी.ई.पी सदस्य देशों में से ऑस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड का दुग्ध उत्पादन में 'आक्रामक' रुचि है। अगर भारत सरकार दुग्ध उत्पादों के ऊपर सीमा शुल्क में कटौती करती है तो भारतीय दुग्ध उद्योग के ऊपर इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ेगा। दुग्ध उत्पाद जैसे तरल दूध, मिल्क पाउडर, मक्खन, पनीर इत्यादि का न्यूजीलैंड और ऑस्ट्रेलिया महत्वपूर्ण निर्यातक देश है। भारत के 15 करोड़ दुग्ध किसानों की तुलना में न्यूजीलैंड में केवल 12,000 और ऑस्ट्रेलिया में केवल 6,300 किसान हैं। भारत विश्व का सबसे बड़ा दुग्ध उत्पादक देश है, जहां 156 मिलियन मेट्रिक टन दूध का रोजाना उत्पादन होता है जो घरेलू स्तर पर ही खपत भी हो जाता है। भारत से दूध या दुग्ध उत्पादन का निर्यात न के बराबर होता है। दूसरी तरफ, न्यूजीलैंड 22 मिलीयन मेट्रिक टन का उत्पादन करता है जिसमें से 19 मिलियन मेट्रिक टन वह निर्यात कर देता है। ऑस्ट्रेलिया 15 मिलियन मेट्रिक टन का उत्पादन करता है और 4 मिलियन मैट्रिक टन का निर्यात करता है। यही वजह है कि दुग्ध कॉरपोरेट जैसे 'फोनटेरा' (न्यूजीलैंड) और सापूतो (ऑस्ट्रेलिया) की नजर आर.सी.ई.पी के ऊपर है जिससे उन्हें भारत के विशाल दुग्ध बाजार में प्रवेश मिल जाएगा। अमूल जैसे भारत के दुग्ध सहकारी संस्थान को डर है कि अगर दूध या

[5] आर.सी.ई.पी के 16–सदस्यीय देशों में से केवल ऑस्ट्रेलिया, जापान, कोरिया, सिंगापुर और वियतनाम ही यू.पी.यो.वी–1991 के सदस्य हैं। चीन और न्यूजीलैंड यू.पी.यो.वी के सदस्य तो है पर उन्होंने 1991 के प्रारूप पर हस्ताक्षर नहीं किया है।

दुग्ध उत्पादों के ऊपर से आयात शुल्क हटा दिया गया तो उससे न सिर्फ भारत का दुग्ध उद्योग और सहकारी संस्थान प्रभावित होंगे बल्कि इसका सीधा असर देश के 15 करोड़ दुध किसानों की आजीविका के ऊपर पड़ेगा।

इसमें कोई शक नहीं है कि 16 देशों में व्यापार को प्रोत्साहित करने के नाम पर आर.सी.ई.पी खाद्य एवं कृषि क्षेत्र के साथ–साथ भारत जैसे देशों के फायदेमंद बाजार को बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हाथों में सौंप देगा। और तो और उनके अधिकारों और निवेश को सुरक्षित रखने के लिए, आर.सी.ई.पी में 'निवेशक–सरकार विवाद निपटान' (Investor-State Dispute Settlement – ISDS) का भी प्रावधान है, जहां निवेशक कंपनियां सरकारों के खिलाफ मुकदमा चला सकती हैं। अगर कोई सदस्य देश आर.सी.ई.पी के तहत किए गए प्रतिबद्धताओं का पालन नहीं करता है तो कोई विदेशी कंपनी उससे होने वाले नुकसान की भरपाई के लिए उस सरकार के ऊपर मुकदमा चला सकती है। यह प्रावधान राष्ट्रीय सरकार की संप्रभुता और नीति–निर्धारण क्षमता के ऊपर सीधा आघात है। इसके जरिए बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हाथों में बेबुनियाद और निरंकुश शक्ति सौंपी जा रही है। भारत के ऊपर पहले से ही करीब 20 ऐसे मुकदमे चल रहे हैं, जहां निवेशकों ने भारत सरकार के ऊपर 'बाइलेटेरल इन्वेस्टमेंट ट्रीटीज़' (बिट) के तहत मुकदमा चला रखा है। अब भारत के ऊपर एक बड़ा दबाव होगा कि वह आर.सी.ई.पी के तहत 'निवेशक–सरकार विवाद निपटान' प्रावधान को स्वीकार करे।

यह अनुमान लगाया जा रहा है कि अगले वर्ष की शुरुआत तक आर.सी.ई.पी के समझौतों को पूरा कर लिया जाएगा। इसीलिए यह अप्रत्याशित रूप से महत्वपूर्ण है कि इस मेगा समझौते से होने वाले खतरनाक परिणामों के बारे में लोगों को जागरूक किया जाए।

हमारी मांगे

- नए मुक्त व्यापार समझौतों के ऊपर भारत सरकार द्वारा तत्काल रोक लगाई जाए
- भारत सरकार द्वारा सभी मौजूदा मुक्त व्यापार समझौतों का विस्तृत मूल्यांकन किया जाए
- आर.सी.ई.पी समेत उन सभी मुक्त व्यापार समझौतों का प्रभाव मूल्यांकन अध्ययन किया जाए जिन पर भारत इस वक्त बातचीत कर रहा है; इसकी रिपोर्ट सार्वजनिक जांच के लिए उपलब्ध कराया जाए
- सरकार को मुक्त व्यापार समझौता वार्ता की प्रक्रिया में तुरंत पारदर्शिता लाना चाहिए और आर.सी.ई.पी समेत सभी मुक्त व्यापार समझौतों से जुड़े दस्तावेजों को सार्वजनिक किया जाए
- भारत सरकार को ऐसे उपाय करने चाहिए जिससे समय–समय पर मुख्य व्यापार समझौतों के ऊपर सभी हितभागियों (किसान संगठन, मजदूर संगठन, नागरिक समाज संगठन, और छोटे व मध्यम उद्यमों के प्रतिनिधियों) के साथ व्यापक जन परामर्श आयोजित किया जाए
- कृषि बीज और स्वास्थ्य जैसे राज्य के कार्यक्षेत्र में आने वाले विषयों के ऊपर केंद्र सरकार को नियमित रूप से राज्य सरकारों से परामर्श करना चाहिए और उनकी आम सहमति प्राप्त करनी चाहिए
- दुग्ध उत्पादन और कृषि कैसे नाजुक एवं महत्वपूर्ण क्षेत्रों में भारत को किसी भी समझौते में शामिल नहीं होना चाहिए; कृषि को किसी भी मुक्त व्यापार समझौते वार्ता से बाहर रखा जाए
- मुक्त व्यापार समझौतों की एक शख्त सीमा हो। किसी भी स्थिति में भारत को अपने 92–97 प्रतिशत माल को किसी भी मुक्त व्यापार के लिए नहीं खोलना चाहिए
- कृषि में ट्रिप्स–प्लस या डेटा विशिष्टता या पेटेंट इत्यादि प्रतिबद्धता स्वीकार न की जाए
- यू.पी.ओ.वी (1978 या 1991) की प्रतिबद्धता को किसी भी मुक्त व्यापार समझौतों में स्वीकार नहीं किया जाए
- किसी भी बौद्धिक संपदा या उससे जुड़े तकनीक के ऊपर कोई पेटेंट को सहमति न दी जाए
- आवश्यक जन सेवा, जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, पानी और स्वच्छता के साथ–साथ सरकारी खरीद को मुक्त व्यापार समझौतों से बाहर रखा जाए
- निवेशकों के अत्यधिक सुरक्षा और कॉरपोरेट द्वारा सरकार पर मुकदमा करने के अधिकार को तुरंत खत्म किया जाए
- निवेशकों के अधिकारों को सुरक्षित रखने के लिए जिस तरह से बौद्धिक संपदा को निवेश की परिभाषा के अंदर शामिल किया गया है, ऐसे में किसी भी निवेशक–सरकार विवाद निपटान प्रावधानों को स्वीकार न किया जाए
- हम किसी भी मुक्त व्यापार समझौतों को लागू करने से पहले उसे संसद द्वारा अनुसमर्थन की प्रक्रिया की मांग करते हैं

ज्यादा जानकारी के लिए संपर्क करें: afsarjafri@yahoo.com और asha.kisanswaraj@yahoo.in

Join the Forum Against FTAs for regular updates: forum-against-ftas@googlegroups.com